महादेवी की कविताओं में स्त्री चेतना

महादेवी की कविताओं को अक्सर प्रेम की व्यापकता, वेदना के साम्राज्य, प्रकृति के सहारे भावाभिव्यक्ति, विराट की छाया जैसे छायावादी तत्वों के संदर्भ में ही देखा जाता रहा है। कुछ आलोचक उनकी कविता के 'मैं' और 'तुम' को आध्यात्मिक संदर्भ में भी देखते हैं। लेकिन किसी कविता को जब तक सामाजिक संदर्भ से जोड़कर नहीं देखा जाता तब तक व्यवहारिक ढंग से इस सवाल का जवाब ही नहीं मिलता कि आखिर कविता किस उद्देश्य से लिखी गई। अगर महादेवी की कविताओं को सामाजिक संदर्भ में देखें तो ये सवाल अनिवार्य रूप से उठता है कि उनकी कविताओं में इतना दर्द क्यों है ? वह अपने जीवन को 'विरह का जलजात' क्यों कहती हैं ? उनका प्रियतम कौन है? मिलन बेला में वह क्यों कहती हैं कि 'सजनी मधुर निजत्व दे कैसे मिलूँ अभिमानिनी मैं' आखिर उन्हें किस बात का अभिमान है ? दरअसल इन सवालों का जवाब पाने के लिए महादेवी के युग में नारी की स्थिति पर नजर डालना होगा। नारी मन की गहराइयों में उतरना होगा।

छायावादी युग से ठीक पहले द्विवेदी युग में नारी से आदर्शपूर्ण आचरण की उम्मीद रखी गई। महादेवी के युग में भी यही स्थिति कायम रही। इसी युग में जयशंकर प्रसाद ने नारी को श्रद्धा का पात्र कहा और उसे जीवन में अमृत की धारा की तरह बहने की हिदायत देकर उसकी इच्छाओं को नजरंदाज कर दिया। साफ शब्दों में कहें तो महादेवी के युग में स्त्री को देवी के आसन पर बैठाकर उसकी मानव सुलभ इच्छाओं को नजरंदाज करना आम बात थी। समाज में सामंती मूल्य जड़ें जमाए हुए थे। स्त्री अपने परिवार के सदस्यों की सुख सुविधाओं का ख्याल रखती थी पर उसकी भावनाओं को समझने वाला कोई नहीं था। सेवा को ही सदियों से उसका धर्म समझा गया था। सेवा के बदले में उपेक्षा पाकर स्त्री का रूठना स्वाभाविक था। महादेवी की कविताओं में रूठी हुई स्त्री का अनोखा विरोध दिखाई देता है। साथ ही सदियों से दबाई गई स्त्री महादेवी की कविताओं में प्रकृति के आवरण से अपनी बात कहती हुई नजर आती है।

महादेवी की स्त्री चेतना 'वे मुस्काते फूल नहीं' कविता में सदाबहार देवलोक को ठुकराती है। यह सोचने वाली बात है कि महादेवी की स्त्री चेतना का मुरझाने से बेखबर फूलों, बुझने की बात से बेखबर तारों के दीपों, आंसूओं से बेखबर नैनों वाले देवलोक को ठुकराने के पीछे आखिर क्या वजह है ? दरअसल यह देवलोक पुरुष प्रधान समाज है जहाँ पुरुष का सिक्का चलता है। यहाँ स्त्री से हर वक्त फूल की तरह खिले रहने, दीप की तरह सेवारत रहने और आंसूओं को छिपाकर जीने की उम्मीद रखी जाती है। यह समाज खुद को पुरुष प्रधान मूल्यों के सांचे में ढाल लेने वाली स्त्री पर ही कृपादृष्टि रखता है। स्त्री की इच्छाओं का यहाँ कोई महत्व नहीं। स्त्री का अपनी इच्छाओं को मारकर दया का पात्र बनकर जीना महादेवी की स्त्री चेतना को कैसे स्वीकार्य होता? यही वजह है कि उनकी स्त्री चेतना सदाबहार देवलोक को ठुकराती है। वह कहती है,

''क्या अमरों का लोक मिलेगा
तेरी करुणा का उपहार ?
रहने दो हे देव ! अरे
यह मेरा मिटने का अधिकार''

यहाँ करुणा शब्द गौर तलब है। करुणा का उपहार दरअसल स्त्री को अपनी इच्छाओं की बलि चढ़ाकर मिलने वाली कृपा है। इसे पाने के लिए स्त्री को देवी बनना पड़ता है। देवी बनकर जहाँ स्त्री दूसरों की इच्छापूर्ति का साधन मात्र बनकर रह जाती है, वहीं पुरुष देव रूप में अबाध स्वतंत्रता भोगता है। तभी महादेवी की स्त्री चेतना देवलोक के अमरत्व को ठुकराकर मिटने के अधिकार को चुनती है। इस अधिकार को चुनकर उनकी स्त्री चेतना एक तरह से पुरुष प्रधान समाज से यह अपील कर रही है कि स्त्री को देवी नहीं बल्कि सामान्य नारी ही माना जाए।

महादेवी के काव्य में देव और असीम एकार्थी नहीं हैं। महादेवी की कविताओं में उनकी स्त्री चेतना असीम से मिलना चाहती है, पर देव से नहीं। वह देव से असंतुष्ट है और कहती है,

''जब असीम से हो जाएगा
मेरी लघु सीमा का मेल
देखोगे तुम देव अमरता
खेलेगी मिटने का खेल।''

यहाँ स्त्री चेतना असीम से मिलकर देव को उसके ही अमरता के मिटने का खेल दिखाने की बात कह रही है। गौर करें कि महादेवी की 'वे मुस्काते फूल नहीं', कविता में भी स्त्री चेतना देव के अमर-लोक को ठुकराती है। सवाल यह है कि असीम से मिलने और देव को अमरता के मिटने का खेल दिखाने का सामाजिक संदर्भ में आखिर क्या अर्थ निकलता है ? दरअसल महादेवी के काव्य में 'देव' पुरुष का प्रतीक है। समाज में उसका वर्चस्व सदियों से कायम है। महादेवी की स्त्री चेतना पुरुषों के इस अमर वर्चस्व को मिटते हुए देखना चाहती थी। पुरुष की अहंजनित कठोरता महादेवी की स्त्री चेतना को खटकती थी। महादेवी की स्त्री चेतना ने पुरुष की कठोरता और इस कठोरता से मिले दर्द को सामाजिक प्रतिबंधों के कारण खुलकर अभिव्यक्त न कर पाने की स्थिति में प्रकृति के उपकरणों के सहारे अभिव्यक्त किया। उदाहरण के तौर पर यह पंक्तियां देखी जा सकती हैं-

''मैं फूलों में रोती वे
बालारुण में मुस्काते
मैं पथ में बिछ जाती हूँ
वे सौरभ में उड़ जाते।''

महादेवी की स्त्री चेतना इस बात से वाकिफ थी कि स्त्री खुद को पुरुष के प्रेम-बंधन में बांधती है और पुरुष स्त्री की संवेदनाओं से खिलवाड़ करता हुआ अक्सर मनमानी करता है। स्त्री का इस तरह जीवन जीने का दर्द महादेवी की इन पंक्तियों में उभरकर सामने आया है।

''वे कहते हैं उनको मैं
अपनी पुतली मे देखूं
यह कौन बता जायेगा
किसमें पुतली को देखूं ?''

यूं ही जीवन जीते-जीते स्त्री और देव अर्थात् पुरुष के बीच दूरियां बढ़ती गईं और हालात ने महादेवी की स्त्री चेतना को यह कहने के लिए मजबूर किया कि,

''अपने जर्जर अंचल में
भरकर सपनो की माया
इन थके हुए प्राणों में
छायी विस्मृति की छाया।''

इस विस्मृति की छाया में महादेवी की कविताओं में दिखने वाली स्त्री ने एक लंबा सफर तय किया है। इस सफर के दौरान वह देव अर्थात् पुरुष को पीछे छोड़कर असीम की ओर बढ़ती गई। देव अर्थात् पुरुष के अमर वर्चस्व को मिटाने के लिए असीम से मिलना जरूरी था। उसके असीम से मिलने की चाह में स्त्री मुक्ति का सपना समाया हुआ है। असीम मानवतावदी मूल्यों का प्रतीक है। उसका साथ पाकर इस स्त्री ने परिवार का छोटा सा दायरा छोड़ा और पूरे विश्व को अपना माना। यह इस स्त्री का जागरण था। इस जागरण के बाद उसे

पुरुष प्रधान सामंती मूल्यों के मुताबिक जीवन जीना मंजूर नहीं था। वह पुरुष प्रधान समाज की कृपादृष्टि हासिल करने का सपना नहीं देखना चाहती थी। तभी वह अपने आप से कहती है,

''मेरे जीवन की जागृति !
देखो फिर भूल न जाना
जो वे सपना बन आवें
तुम चिर निद्रा बन जाना।''

असीम के रूप में मानवतावादी मूल्यों को अपनाकर महादेवी की स्त्री चेतना ने दुखी जनों की सेवा का संकल्प लिया। यह संकल्प सामंती मूल्यों से चोट खाने का परिणाम कहा जा सकता है। महादेवी की स्त्री चेतना का समष्टि के हित के लिए समर्पण का भाव महादेवी की 'मैं नीर भरी दुख की बदली' कविता में देखा जा सकता है। परिवार के लिए खुद को मिटाने वाली स्त्री को दुखी जनों की सेवा का संकल्प लेने का रास्ता दिखाकर महादेवी की स्त्री चेतना ने उसके चरित्र को एक दृढ़ आधार दिया।

स्त्री का उपेक्षा सहते हुए जैसे-तैसे जीवन जीना महादेवी की स्त्री चेतना को स्वीकार्य नहीं था। उसने स्त्री को उपेक्षा के अंधकार में डूबकर जीने के बजाय संघर्षशील बनकर जीने का रास्ता दिखाया। यह संघर्ष एक स्त्री का परिवार में अपना वर्चस्व स्थापित करने के लिए पुरुष को हर हाल में नीचा दिखाने वाला नारीवादी संघर्ष नहीं बल्कि पुरुष के कठोर हृदय को पिघलाने के लिए सामन्ती मूल्यों के खिलाफ किया जाने वाला संघर्ष था। इस संघर्ष में स्त्री का देव अर्थात् पुरुष के प्रति यह वक्तव्य देखिए -

''इस एक बूंद आंसू में
चाहे साम्राज्य बहा दो
वरदानों की वर्षा से
यह सूनापन बिखरा दो।

X X X

पर शेष नहीं होगी यह
मेरे प्राणों की क्रीड़ा
तुमको पीड़ा में ढूंढा
तुममे ढूंढूंगी पीड़ा।''

इन पंक्तियों से स्त्री के मन की यह बात साफ जाहिर होती है कि उसका उपेक्षा के कारण आहत मन अब देव के वरदानों से संतुष्ट नहीं होने वाला। उसके मन का यह असंतोष बना ही रहेगा। अब तक वह गहरी उपेक्षा सहते हुए भी पुरुष को संतुष्ट रखने की कोशिश करती रही है। पर अब वह पुरुष की कठोरता की हद देखना चाहती है। उसमें संवेदनशीलता की तलाश करना चाहती है। यहाँ महादेवी की स्त्री चेतना का जुझारूपन देखने लायक है। यह गौर करने लायक बात है कि उनकी कविताओं में अभिव्यक्त स्त्री चेतना से प्रेरित विरोध न पूरी तरह से मौन है और न ही मुखर। अन्य शब्दों में कहें तो महादेवी की स्त्री चेतना का जुझारूपन अनोखे किस्म का है।

पुरुष और पुरुष प्रधान समाज की कठोरता और इसके चलते स्त्री के दर्द भोगने की हकीकत से महादेवी की स्त्री चेतना भली-भांति वाकिफ थी। इसलिए वह समाज में प्रेम का प्रसार करना चाहती थी। महादेवी के युग में पुरुष का वर्चस्व, प्रेम पर प्रतिबंध, स्त्री की इच्छाओं पर प्रतिबंध जैसे सामंती मूल्यों के दायरे में स्त्री का दम घुट रहा था। वह खुली हवा में सांस लेना चाहती थी। ऐसे हालात पैदा करने के लिए सामंती मूल्यों पर प्रहार करना जरूरी था। इस कार्य को अंजाम देने के लिए महादेवी की स्त्री चेतना 'वसंत रजनी' रूपी स्त्री की परिकल्पना करती है। यह बात गौरतलब है कि 'धीरे-धीरे उतर क्षितिज' से कविता में महादेवी की स्त्री चेतना

‘वसंत रजनी’ को एक ऐसे समाज में पुलकित सपनों की रोमावली के साथ आने के लिए कहती है जहाँ स्त्री का सपना देखना बेमायने है। यह भी गौर तलब है कि यह ‘वसंत रजनी’ रूपी स्त्री परिस्थितियों से समझौता करके और अपनी इच्छाओं को दबाकर नहीं जीती। उसकी होठों में आत्मविश्वासपूर्ण हँसी है। महादेवी की ‘वसंत रजनी’ का यह रूप पुरुष प्रधान मूल्यों को चुनौती देता हुआ सा जान पड़ता है।

छायावाद के चार स्तंभों में महादेवी एक मात्र कवयित्री थीं। स्त्री के मन की बारीक बातों को अपनी कविताओं में बखूबी तराशने के कारण महादेवी का काव्य अन्य छायावादी कवियों से अलग है। बारीकी से देखें तो आज के युग में भी महादेवी की स्त्री चेतना की प्रासंगिकता असंदिग्ध है। आज की स्त्री चाहे वह कामकाजी हो या गृहिणी, सामंती मूल्यों के प्रकोप से पूरी तरह से मुक्त नहीं हो पाई है। कामकाजी स्त्री ने घर से बाहर कदम तो रखा पर परिवार के दायित्व की डोर को उसने अपने हाथों से छूटने नहीं दिया। पर ऐसे परिवार कम ही हैं जो स्त्री की इस दोहरी भूमिका को समझते और सराहते हैं। परिवार के लिए मर मिटना उसका जन्मजात कर्म माना जाता है। इसलिए बाहरी कामकाज के कारण घर के दायित्व में जरा सी कटौती को पुरुष प्रधान समाज आसानी से स्वीकार नहीं करता। तमाम दायित्वों के बीच स्त्री की इच्छाओं का भोला संसार आज भी उपेक्षित रह जाता है। आज की स्त्री का उपेक्षा जनित दुख महादेवी के युग की स्त्री के दुख से साम्य रखता है। लेकिन हकीकत का एक पहलू यह भी है कि आज की कवयित्रियों को स्त्री चेतना की अभिव्यक्ति के लिए महादेवी की स्त्री चेतना की तरह किसी आवरण का सहारा नहीं लेना पड़ता। उसकी मुखरता अनामिका, सविता सिंह, मधु० बी० जोशी कवयित्रियों की कविताओं में देखी जा सकती है। पर हिन्दी कविता में व्यक्त स्त्री की लंबी संघर्ष गाथा को यदि देखें तो स्त्री चेतना को इस पड़ाव तक पहुँचने के लिए एक लंबा संघर्ष करना पड़ा है। स्त्री की लंबी संघर्ष गाथा में महादेवी की स्त्री चेतना का अनोखा विरोध मील के पत्थर की तरह है। यही वह पड़ाव है जहाँ से सामंती समाज में उपेक्षित स्त्री की स्त्री चेतना सामाजिक परिस्थितियों से टकराते हुए क्रमशः मुखर होती गई। आज की कवयित्रियों की स्त्री चेतना मुखर तो है, पर वह भारतीय स्त्री के गरिमामय रूप को भी संजोये हुए है। अपने इसी गुण के कारण आज की कवयित्रियों की स्त्री चेतना को महादेवी की स्त्री चेतना की परम्परा की अगली कड़ी कहा जा सकता है। गौर से देखें तो महादेवी की स्त्री चेतना में दकमने वाला भारतीय संस्कृति का सशक्त गरिमामय रूप आज की स्त्री को पश्चिम से आयातित स्त्रीवाद से प्रेरित होकर परिवार को अपने वर्चस्व की लड़ाई का अखाड़ा बनाने, संतानों के लिए अभिशाप बन जाने और विरोध की राह पर चलने से पहले अपने विवेक से चंद सवाल पूछने के लिए बाध्य करने की ताकत रखता है।